राजयोग के प्रारम्भिक अनुशासन

राजयोग के प्रथम दो चरणों में पाँच यम और पाँच नियम आते हैं। इनका तत्त्व प्रयोजन दसों इन्द्रियों को परिष्कृत मनोभावों के अन्तर्गत अनुशासित करना है।काया का इस प्रकार संयमी बनाना है जिससे कषाय-कल्मषों के कार्यान्वित होने की कहीं गुंजायश न रहे। यह बन पड़ने पर व्यक्ति आदर्शवादी उत्कृष्टता सम्पन्न एवं पवित्रता सात्विकता से समन्वित बन जाता है। यह साधारण जीवन में प्रयुक्त होने वाला अनुशासन एवं श्रेष्ठता सम्पन्न क्रिया कलाप है। जीवनचर्या बहिरंग और अन्तरंग क्षेत्र में शालीनता से परिपूर्ण हो तो समझना चाहिए कि योग साधना के आरम्भिक दश अनुशासन बन पड़े और योगाभ्यास का महत्वपूर्ण पक्ष पूरा हो गया। यम और नियम यों संख्या की दृष्टि से दो गिने जाते हैं, पर वे वर्गीकृत होने पर दस हो जाते हैं। इसमें जीवन गरिमा की दसों दिशाओं का समावेश हो जाता है। जिससे इतना करते बन पड़े समझना चाहिए कि उसने योग मार्ग की आधी मंजिल पार कर ली। भूमि को खाद पानी देकर जुताई-गुड़ाई के सहारे उर्वर बना लिया।

इसके आगे तीसरे और चौथे चरण में आते हैं। आसन प्राणायाम। इनका क्रिया कलाप तो सरल और सर्वविदित है। पर काम चलता है उनके साथ जुड़े हुए रहस्यों और तथ्यों को भली प्रकार समझने और अपनाने से। इन दो चरणों को गुण-कर्म-स्वभाव की उत्कृष्टता समझा और समझाया जाना चाहिए।

आसन के रूप में पद्मासन मयूरासन पश्चिमोत्तानासन शीर्षासन, आदि के व्यायाम सीखे और सिखाये जाते हैं। यह व्यायाम वर्ग का प्रयोग है, जिसका तात्पर्य श्रम-शील जीवन, आहार-विहार के नियम में आरोग्य का संरक्षण, आसन प्रक्रिया में स्वास्थ्य रक्षा के लिए आवश्यक नियमों के पालने की बात कही गई है। इसमें आहार और विहार दोनों आते हैं। आसनों को मात्र व्यायाम तक ही सीमित नहीं मानना चाहिए वरन् यह भी सोचना चाहिए कि इस विद्या से सात्विक आहार के सम्बन्ध में भी आसन के उपरान्त प्राणायाम की बारी आती है। प्राणायाम मोटे अर्थों में गहरी साँस छोड़ना और उसे पूरी तरह बाहर निकालना है। साँस लेने की दृष्टि से यही उपयुक्त तरीका है। हवा के साथ आक्सीजन-प्राण वायु भी घुली होती है। गहरी साँस लेने से फेफड़ों में पूरी हवा भरती है, इससे अधिक मात्रा में प्राण तत्त्व शरीर को उपलब्ध होता है। फेफड़ों में खाली जगह रहने से उस बंद जगह में क्षय जैसे रोगों के कीटाणु पलने लगते हैं। पूरी गहरी साँस लेने से न केवल फेफड़ों की वरन् समूचे शरीर के तंतु जाल को जीवन तत्त्व की बहुलता प्राप्त होती है। रक्त शोधन का क्रम ठीक प्रकार चलता है। यह नीरोग शरीर और दीर्घ जीवन की दृष्टि से उपयुक्त प्रयोग है। यह शारीरिक प्रयोग-प्रयोजन हुआ। मानसिक दृष्टि से प्राणायाम साहसिकता का प्रतीक है। अमुक व्यक्ति प्राणवान है इस प्रकार का कथन उसके साहसी होने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। प्राणवान अर्थात् साहसी।

साहस मानसिक गुण है। शरीर बलिष्ठ हो सकता है, पर यह आवश्यक नहीं कि उसमें साहस भी हो। कितने ही स्थूलकाय व्यक्ति कायर भीरु भी हो सकते हैं। इसके विपरीत ऐसा भी देखा गया है कि गांधीजी जैसे दुर्बलकाय व्यक्ति आसीम साहस के भण्डार थे। मनस्वी ऐसे ही व्यक्तियों को कहते हैं। उन्हीं को ओजस्वी-तेजस्वी भी कहा जाता है। प्राणायाम से यह विशेषताएँ बढ़ती हैं। पर ऐसा भी होता है कि बिना विधिवत् प्राणायाम साधे भी कोइ व्यक्ति मनस्वी हो। नैपोलियन, सिकदर जैसे कितने ही व्यक्ति ऐसे हुए हैं जो शौर्य साहस के धनी थे। यद्यपि योग विधि में वर्णित प्रायायाम नहीं करते थे।

योगाभ्यास के प्रकरण में जहाँ प्राणायाम का वर्णन आया हो वहाँ उसे मात्र श्वास प्रश्वास क्रिया की गहराई तक ही सीमित नहीं मानना चाहिए वरन् यह भी समझना चाहिए कि उच्चस्तरीय महत्वपूर्ण कार्यों को करने के लिए जिस

शारीरिक पराक्रम और मानसिक शौर्य के लिए संकेत किया जा रहा है। उसे सम्पादित किया जाना चाहिए। योगाभ्यास में पग-पग पर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद-मत्सर जैसे असुरों को निरस्त करने के लिए संघर्ष ठानना पड़ता है, और निश्चय करना पड़ता है कि कितना ही श्रम क्यों न पड़े, समय क्यों न लगे पर अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँच कर ही रहा जायगा। ऐसी प्रचण्ड इच्छा शक्ति संकल्पजन्य दृढ़ता आध्यात्मिकता के साथ जुड़ी रहती है।

आन्तरिक दुर्बलताओं और बाह्य क्षेत्र की कठिनाइयों, आकर्षणों, दबावों से संघर्ष करने के लिए शरीर बल, शस्त्रबल आदि की अपेक्षा मनोबल की अधिक आवश्यकता पड़ती है। इसी को अर्जित करने के लिए श्वँस प्रश्वँस से ऊर्जा बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है जिस भी विधि से प्राण-चेतना, साहसिकता बढ़े उसे प्रकारान्तर से प्राणायाम ही कहा जायगा।

राजयोग के आठ अंगों में प्राणायाम तक पाँच पूरे हो जाते है छठा है प्रत्याहार। इसका स्वरूप है- प्रतिरोधी प्रक्रिया। जन्म जन्मान्तरों से संचित कुसंस्कार हर किसी को घेरे होते हैं। वे समय समय पर उभर कर ऊपर आते रहते हैं। मनुष्य जीवन मिलने पर मानवी गरिमा के अनुरूप आचरण की जिम्मेदारी सिर पर आती है। उन्हें पूरा करने पर ही लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव होती है। किन्तु कठिनाइयाँ दो हैं। एक तो हेय योनियों में भ्रमण करते समय जो कुसंस्कार स्वभाव के अंग बन कर रहे हैं. वे अवसर मिलते ही उसी प्रकार उभर आते हैं, जैसे वर्षा होते ही घास की सूखी जड़ें हरी हो जाती हैं और देखते देखते सूखे धरातल पर हरीतिमा छा जाती है। कुसंस्कारों को जब तक दबाये रखा जाय तब तक वे दबे रहते हैं; किन्तु जैसे ही शिथिल हुआ। पशु प्रवृत्तियाँ अपना कौतुक दिखाने लगती है।

इसके अतिरिक्त दूसरी बात यह है कि समाज में सभी ओर दुष्प्रवृत्तियों का प्रचलन है। जनसाधारण का स्वभाव बहुमत की नकल करना है। अधिकांश लोग जिस प्रकार बरतते हैं, उसी प्रकार सामान्य जनों का व्यवहार भी उसी मार्ग पर चल पड़ता है। योग साधना के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों को भी इस मोर्चे पर जूझना पड़ता है। वे अपने अन्तरंग और बहिरंग जीवन को आदर्श उत्कृष्ट बनाना चाहते हैं. किन्तु प्रचलन को देखकर साधक की ललक भी उसी दिशा में मचलने लगती हैं। यहाँ यदि अवरोध का मोर्चा कमजोर पड़े तो हेय दुष्प्रवृतियों की चढ़ बनती है और साधना में अनेकानेक विघ्न खड़े हो जाते हैं। इसीलिए प्रतिवादी प्रतिपक्षी संघर्ष शीलता का विभिन्न अभ्यासों द्वारा ऐसा स्वभाव बनाना पड़ता है; जो किसी भी अवसर पर. चूकने न पाये। प्रत्याहार अर्थात् परास्त करने का कौशल।यह व्यक्तियों का, समूहों का, परिस्थितियों का ही उलटना नहीं वरन् अवांछनीय मनोदशाओं को भी परास्त कर देना-उनसे बच निकलना भी है। प्रत्याहार की साधनाएँ कतिपय हैं. उनके नाम रूप अनेक हैं पर उद्देश्य एक ही हैं-अनौचित्य को परास्त करना। □

स्वामी विवेकानन्द बनारस की एक सँकरी गली से जा रहे थे। रास्ता घेरे बन्दरों का एक झुण्ड बैठा था।

स्वामी जी डरे और भागकर लौटने लगे। बन्दरों ने पीछा किया। कपड़ा फाड़ दिया और कई जगह काट दिया।

चीख पुकार सुनकर गली का एक गृहस्थ बाहर निकला उसने कहा- भागो मत, सामना करो, कुछ नहीं तो घूँसा तान कर इनकी ओर बढ़ो।

स्वामी जी ने वैसा ही किया। बन्दर ठिठके और धीरे-धीरे इधर-उधर बिखर गए।

विवेकानन्द ने समझा कि कठिनाइयों से डरना,भागना व्यर्थ है। उससे जूझने के लिए हिम्मत के सहारे आगे बढ़ना चाहिए।